IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बिहार के क्रांतिकारी देशभक्तों की गौरव–गाथाः– एक समग्र अध्ययन

डा0 सुनिल कुमार
पूर्व शोध छात्र (इतिहास विभाग)
बी0आर0ए0बी0यू0 मुजफ्फरपुर

बिहार का इतिहास हमेशा गौरवशाली रहा है। प्राचीन काल से ही यह राज्य सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक चेतना का केन्द्र बिन्दु रहा है। चन्द्रगुप्त, अशोक तथा शेरशाह जैसे राजनायक एवं गुरू गोविन्द सिंह जैसे धर्म गुरू बिहार की मिट्टी में पैदा हुये है। गौतम बुद्ध एवं महावीर को ज्ञान का अलौकिक प्रकाश बिहार से ही प्राप्त हुआ। चाहे धार्मिक–राजनीतिक आंदोलन हो, अथवा, विशुद्ध संवैधानिक आंदोलन हो, उग्र क्रांतिकारी विस्फोट हो अथवा, महात्मा गॉधी के अनुप्रेरक नेतृत्व में सत्याग्रह आंदोलन, सभी में बिहार की महत्वपूर्ण देन रही है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गॉधी का पहला प्रयोग बिहार के चंपारण में किया जाना मात्र एक संयोग नहीं है, बल्कि बिहारियों की संवेदनशीलता एवं उनकी दुरदर्शिता का परिणाम है। आज जबकि बिहार की नई पीढ़ी अपसंस्कृति का शिकार बनती जा रही है और अपनी परंपरा से अलग होकर दिशाहीनता के अंधेरे गर्भ में अनजाने में ही बढ़ती जा रही है। मेरा यह प्रयास होगा कि अपने पुरखों का गौरव स्मरण करें। बिहार में ऐसे ही क्रांतिकारी देशभक्तो की गाथा है, जिनके नाम है– खुदीराम बोस, सरयू प्रसाद, काशी प्रसाद जयसवाल, सर यदुनाथ सरकार, रास बिहारी लाल, मणीन्द्र नारायण राय, बटुकेश्वर दत्त, जय प्रकाश नारायण, योगेन्द्र शुक्ल,राम विनोद सिंह, सूरज नारायण, श्याम देव नारायण, केशव प्रसाद सिंह, बैकुंठ शुक्ल, सूरज नारायण सिंह, जुब्बा सहनी इत्यादी। इन में से कुछ ऐसे भी लोग है जो बिहार के नहीं होते हुये भी पूर्णतः बिहारी थे तथा उनका कार्यक्षेत्र बिहार था। राष्ट्रीयता की भावना ने क्रांतिकारियों को उत्प्रेरित किया अथवा, क्रांतिकारियों के जीवन एवं उनके विचारों ने बिहार में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न की।

1906 ई0 से 1919 ई0 की लघु अवधि में ही कांग्रेस का वामपंथ तीन टुकड़ों में बँट गया– उग्रवादी, क्रांतिकारी और आतंकवादी। आतंकवादियों का पदार्पण बंगाल–विभाजन के फलस्वरूप हुआ। 1906 ई0 से 1919 ई0 तक वे बहुत अधिक सक्रिय रहे। देश की आजादी के लिये उन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगा दिया। क्रूर और आतातायी अंग्रेज शासकों पर बम फेंकने अथवा गोली दागने में वे जरा भी नहीं हिचकते थे। खुदीराम बोस और प्रफुल्ल चाकी क्रांतिकारियों के इतिहास में सदा अमर रहेंगे। 1919 के बाद महात्मा गाँधी जन आन्दोलन के नेता बन गये। वे हिंसात्मक और तोड़फोड़ की नीति के कट्टर विरोधी थे इसलिए क्रांतिकारियों और आतंकवादियों की गतिविधियाँ शिथिल पड़ती गयी। फिर भी समय–समय पर न्यूनाधिक रूप में आतंकवाद भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रभावित करता रहा। इस दिशा में मास्टर अमीरचन्द, असफाकउल्ला खाँ, रामप्रसाद विस्मिल, सरदार भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरू, चन्द्रशेखर आजाद, यतीन्द्रनाथ दास आदि के नाम उल्लेखनीय है।

देश के कुछ ऐसे युवक जो उदारवादी और उग्रवादी दोनों की गतिविधियों से संतुष्ट नहीं थे, लेकिन राष्ट्रभक्त थे। देश को विदेशी दासता से मुक्त कराने के लिये प्राणों की आहूति देने को तत्पर रहते थे। वे काफी साहसी तथा उत्साही थे। वे हँसते–हँसते फाँसी के तख्ते पर चढ़ने को तैयार रहते थे। लेकिन ब्रिटिश हुकूमत से लड़ने के लिये न उनके पास पर्याप्त हथियार थे और न जनता का सहयोग था। फिर भी वे इतने निर्भीक थे कि वे जालिम अंग्रेज पर बम फेंकते थे अथवा उन्हें गोली का शिकार बनाते थे। वे बम और बन्दूक बनाते भी थे और बाहर से भी अस्त्र–शस्त्र मँगाते थे। शस्त्रों की खरीद तथा संगठन–संचालन के लिये सरकारी खजानों को लूटते थे और डाका भी डालते थे।

जिस समय भारत में ब्रिटिश हुकूमत के विरूद्ध बंगाल के विभाजन के बाद स्वदेशी आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार शुरू हुआ, इसी के साथ–साथ बंगाल में दमन के विरूद्ध क्रांतिकारी गतिविधियाँ बढ़ी और जब किंग्सफोर्ड की हत्या के आरोप में नवयुवा खुदीराम बोस को फाँसी दी गयी और प्रफुल्ल चाकी ने आत्महत्या कर ली। एक मुखबिर को जेल में ही मार डालने के अपराध में कन्हाई लाल दत्त और उल्लासकर दत्त को फाँसी दे दी गयी तो उसकी गूँज भारत के बाहर सुनायी दी। उन दिनों कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी तट पर काफी हिन्दुस्तानी मजदूरी करने पहुँच गये थे।

देश और विदेश में ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ सशस्त्र क्रांति का पथ जिन लोगों ने अपनाया था और जिन्होंने सोये हुये भारतीय राष्ट्रवाद को जगाया था, उनमें निम्न देशभक्त प्रमुख थेः–

खुदीराम बोस का जन्म 1889 ई0 में पश्चिम बंगाल के मिदनापुर जिला के हबीबपुर ग्राम में हुआ था। उनकी प्राथमिक शिक्षा तामलुक हैमिल्टन स्कूल एवं मिदनापुर कॉलेजिएट स्कूल में हुयी। वे केवल तीसरी कक्षा तक ही शिक्षा प्राप्त कर सके। खुदीराम बोस ने मैजिनी, गैरिबाल्डी के जीवन–चरित्र को विस्तार रूप से पढ़ा, गीता और आनंदमठ के दर्शन से प्रभावित होकर वे देश की आजादी के लिये क्रांतिकारी देशभक्त होने का रास्ता चुना।

12 वर्ष की उम्र में युगान्तर दल के सक्रिय सदस्य बन गये। उस समय युगान्तर दल के नेता बारीन्द्र कुमार घोष थे।[1] बारीन्द्र घोष ने अप्रैल, 1908 ई0 में मुजफ्फरपुर के जिला न्यायाधीश डी0एच0 किंग्सफोर्ड की हत्या करने की योजना बनायी। किंग्सफोर्ड मुजफ्फरपुर के जिला न्यायाधीश बनने से पहले वह कलकत्ता में चीफ जुडिशियल मजिस्ट्रेट था। 30 अप्रैल, 1908 ई0 को किंग्सफोर्ड पर यूरोपीयन क्लब जाने के क्रम में उसकी बग्घी पर बम फेंक दिया। बड़े अफसोस की बात थी कि किंग्सफोर्ड की बग्घी की तरह ही मुजफ्फरपुर शहर में एक और हरे रंग की बग्घी थी जो स्थानीय अंग्रेज बैरिस्टर, प्रिंगले केनेडी की थी। उस दिन उस बग्घी पर प्रिंगले केनेडी की पत्नी और उसकी बेटी सवार थी। बम के हमले से उसकी बेटी की मृत्यु घटनास्थल पर ही हो गयी, जबकि पत्नी की मृत्यु घटना के 28 घंटे बाद अस्पताल में हो गयी।[2] 9 जून से 13 जून, 1908 ई0 तक मुकदमा चला। खुदीराम बोस को फाँसी की सजा सुनायी गयी। उस समय खुदीराम की उम्र 17 वर्ष की थी। दूसरी तरफ उनका सहयोगी प्रफुल्ल चाकी ने मोकामा रेलवे स्टेशन के पास खुद को गोली मार कर आत्महत्या कर ली। नंदलाल बनर्जी जो ब्रिटिश हुकूमत में दारोगा था वह उनका समस्तीपुर से ही पीछा कर रहा था, उसी क्रम में उसने प्रफुल्ल चाकी को गिरफ्तार करने का प्रयास किया।

मुजफ्फरपुर बम–कांड में भले ही किंग्सफोर्ड की मृत्यु न हुयी लेकिन इस घटना के बाद सम्पूर्ण बिहार में राजनैतिक चेतना की लहर दौड़ पड़ी और खुदीराम बोस की पूरे देश में एक देशभक्त शहीद के रूप में जय–जयकार हुयी। इस प्रकार से हम खुदीराम की जीवनवृती एवं देश की आजादी के लिये उनके द्वारा किये गये संघर्ष ने उनके शहादत के बाद भी उन्हें जिन्दा रखा और जब तक भारत के लोग 15 अगस्त पर झण्डा फहरायेंगे तब तक उनको देश के वीर सपूतों में याद किया जायेगा।

सरयू प्रसाद का जन्म 1882 ई0 में सारण जिला के बनियापुर थानान्तर्गत हरपुर कोराह गाँव में बनारसी प्रसाद के घर में हुआ था। बनारसी प्रसाद एक बड़े जमींदार थे। सरयू प्रसाद की शुरूआती शिक्षा छपरा जिला स्कूल से हुयी, वे वहाँ 1906 ई0 तक पढ़े फिर आगे की पढ़ाई के लिये वे 1908 ई0 में लन्दन चले गये जहाँ से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की तथा वहीं से वकालत की शिक्षा प्राप्त किया।

देश को स्वतंत्र करने की प्रेरणा उन्हें लंदन में क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आने के बाद आया। सरयू प्रसाद इण्डिया हाउस जो भारत के क्रांतिकारियों का अखाड़ा था, के सम्पर्क में आये तथा तुरंत इसके गुप्त समिति तथा अंदरूनी मंडली के महत्वपूर्ण सदस्य बन गये।[3] 5 जनवरी, 1912 ई0 को सरयू प्रसाद भारत लौट कर, छपरा में वकालत शुरू की। 1912 ई0 में बाँकीपुर में होने वाली कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में भाग लिया। वे आगे अखिल भारतीय कांग्रेस की नीतियों तथा कार्यक्रमों के सम्पर्क में आये। सरयू प्रसाद कांग्रेस के एक सदस्य बन गये। भारत लौटने के बाद सरयू प्रसाद ने क्रांतिकारी गतिविधियों को छोड़ कर कांग्रेस से संबंधित कार्यक्रमों में भाग लेना शुरू कर दिया। 1916 ई0 में जब पटना उच्च न्यायालय की स्थापना हुयी, वे छपरा से पटना आकर वकालत करना शुरू किया। 1919 ई0 में उन्होंने अपनी वकालत छोड़कर सामाजिक कार्य में लग गये। शिक्षा के विकास के लिये वे अपने खर्च पर सारण जिले के दो गाँवों– बैकुंठपुर तथा हरपुर– में एक–एक स्कूल खोले, 1964 ई0 में उनकी स्वभाविक मृत्यु हो गयी।

इस प्रकार से सरयू प्रसाद की सम्पूर्ण जीवन का विस्तारपूर्वक अध्ययन करने के बाद हम पाते हैं कि पढ़ने–लिखने में काफी तेज विद्यार्थी के अलावा शुरूआती दौर से ही उनके अन्दर देश की आजादी का जज्बा था, जिसकी शुरूआत उन्होंने लंदन में वकालत पढ़ते समय एक क्रांतिकारी के रूप में किया उन्होंने देश की आजादी और क्रांतिकारी देशभक्तों को अनेक तरह से मदद पहुँचा कर भारतमाता की सेवा की। भारत लौटने के बाद वे थोड़ा गंभीर हुये और उनका झुकाव कांग्रेस की ओर बढ़ने लगा। अब वे कांग्रेस के विचारों से सहमत होने लगे। लेकिन फिर एक बार सरयू प्रसाद में बदलाव हुआ और वे अब एक समाजसेवी के रूप में नजर आने लगे। इस

प्रकार से सरयू प्रसाद के सम्पूर्ण जीवन को हम तीन भागों में बाँट कर देखे तो पाते हैं कि वे एक क्रांतिकारी, एक आदर्शवादी शांति दल के सिपाही और एक सच्चा समाज सेवक के रूप में नजर आते हैं।

जुब्बा सहनी का जन्म 1906 ई0 में मुजफ्फरपुर जिला के मीनापुर थाने के चैनपुर गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम पाचू सहनी था। मल्लाह जाति के होने के कारण उनका परिवार जीविका के लिये मछली का धंधा कर अपना परिवार का पालन पोषण करते थे। जुब्बा सहनी जब होश संभाला तो घर में गरीबी इतनी थी कि वे स्कूल जाने के बजाय अपने पिता और बड़े भाई के साथ मछली पकड़ने के तरीके सीखने लगे।

20 वर्ष की उम्र में 1927 ई0 में भिखनपुरा चीनी मील के एक एग्रीकल्चर फॉर्म में नौकरी मिल गयी।[4]जुब्बा सहनी यहाँ कभी ईख काटने, तो कभी ईख को मिल में भेजने के लिये ट्राली पर ईख लादने का काम किया करते थे। जुब्बा सहनी बचपन से ही स्वाभिमानी और स्वतंत्र विचारों वाले व्यक्ति थे। चीनी मिल में काम करने वाले ऑफिसर प्रायः अंग्रेज और इक्के–दुक्के बंगाली हुआ करते थे। एक दिन जब खाना खाने का समय हुआ तो जुब्बा समय से थोड़ा पहले ही काम रोक कर खाना खाने चले जा रहे थे। इसी बीच नशे में धुत सुपरवाइजर ने उन्हें देख लिया और तेजी से पास आकर उनको डाटते हुये उसने जुब्बा को अपनी बूट से मारना शुरू किया।[5] वे एक भूखे शेर की तरह उस पर टूट पड़े और सुपरवाइजर को खेत में पटक कर उन्होंने खूब पीटा और फिर ईख के घने खेत से होते हुये सबों की आँखों से ओझल हो गये। सुपरवाइजर के पीटने का मामला मीनापुर थाने में दर्ज हुआ और उन्हें गिरफ्तार करने के लिये वारंट भी जारी किया गया। लेकिन ब्रिटिश हुकूमत के सिपाही उन्हें गिरफ्तार नहीं कर पाये।

गाँधीजी के द्वारा शुरू किये गये सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सहयोग करने के लिये जुब्बा सहनी अपने सहोदर भाई बांगुर सहनी के साथ आन्दोलन में कूद पड़े। 1932 ई0 के दिसम्बर महीने में मुजफ्फरपुर के सरैयागंज मारवाड़ी धर्मशाला के निकट शराब की दुकान पर नशाखोरी के विरूद्ध पिकेटिंग करते समय ब्रिटिश हुकूमत के सिपाहियों ने जुब्बा सहनी को गिरफ्तार कर बहशियाना तरीके से पिटाई की जिससे उनकी बाँयी छाती की तरफ की तीन पसलियों की हड्डियाँ टूट गयी। 1932 ई0 से 1942 ई0 तक भूमिगत स्वतंत्रता सेनानियों के बीच पत्रों का लाना ले जाना का काम करते रहे और उनकी जरूरतों के समान को पहुँचाना जुब्बा सहनी का काम था। 1942 ई0 के भारत छोड़ो आन्दोलन में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा बिहार का योगदान सर्वोपरि रहा। 12 अगस्त, 1942 ई0 को मीनापुर थाना पर आक्रमण करने का असफल प्रयास किया गया था।[6] वालर अपनी पिस्टल से दनादन गोलियाँ चलाने लगा। उसके पिस्टल से निकली हुयी पहली गोली थाना के सामने खड़े होकर आन्दोलनकारियों को ललकारते हुये 32 वर्षीय जुब्बा सहनी के सहोदर भाई ''बांगूर सहनी की छाती में जा लगी और वह जमीन पर गिरकर छटपटाने लगा, जिसकी मृत्यु थोड़ी ही देर में हो गयी। अपने भाई और साथी की हालत देख जुब्बा सहनी का क्रोध भड़क उठा और वे उसी वक्त वालर को पकड़ का पीटने लगे। यह सब देख अपराधियों ने भी आन्दोलनकारियों के साथ मिलकर थाना के फर्नीचर तथा अन्य सामान बाहर निकाल कर आग के हवाले कर दिया। जुब्बा सहनी ने लियो वालर को उठाकर जिन्दा आग में झोक दिया।

वालर को जिंदा आग में जला देने की सूचना पाते ही मुजफ्फरपुर के जिला कलक्टर बौखला कर अंग्रेज पुलिस और नगर घुड़सवार पुलिस को वहाँ भेज आन्दोलनकारियों की धर–पकड़ शुरू कर दी। फिर भी आन्दोलनकारियों का उत्साह कम नहीं हुआ, बल्कि यह आन्दोलन और जोर पकड़ता गया। जुब्बा भाई एवं उनके अन्य साथियों ने मीनापुर थाना को अपने कब्जे में कर लिया। ब्रिटिश फौज ने आनन–फानन में हजारों को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया। केवल वालर हत्या काण्ड में 188 लोगों को मुदई साबित करने के लिये कोर्ट में मुकदमा चला। परंतु सिर्फ 56 व्यक्तियों को दोषी होने का सबूत प्राप्त हुआ। उन्होंने अपने 56 साथियों की प्राण रक्षा के लिये मुजफ्फरपुर कोर्ट में आत्मसमर्पण कर दिया। केस चलता रहा। अन्त में उन्होंने ब्रिटिश हुकूमत के सामने क्रांतिकारी आवाज को बुलंद की ''वालर को उनलोगों ने नहीं मैंने मारा है।'' जुब्बा भाई के इन्कलाबी जवाब ने न्यायालय की फाँसी का हुक्म लिखने वाली कलम को जबरदस्त झटका दिया और उस जल्लादी कलम की वार को उन्होंने अपनी ही गर्दन पर रोक लिया।

जुब्बा भाई को पहले तो मुजफ्फरपुर सेन्ट्रल–जेल में रखा गया, फिर उन्हें बक्सर सेन्ट्रल जेल में भेजा गया। उसके बाद भी ब्रिटिश हुकूमत का मन नहीं भरा तो उनको अपने गृह जिला से काफी दूर भागलपुर सेन्ट्रल जेल भेजा गया। वहाँ उन्होंने कुछ दिनों तक कैदी जीवन व्यतीत किया। भागलपुर सेन्ट्रल जेल में कैदी जीवन व्यतीत करते हुये 38 वर्ष की उम्र में 11 मार्च, 1944 ई0 की मनहूस सुबह फाँसी के फंदे को हँसते–हँसते गले लगा लिया।

बेहद गरीब घर में जन्में, शिक्षा–दीक्षा से दूर रहने वाले जुब्बा सहनी की उम्र जब पढ़ने की हुयी तो पेट की भूख ने अपने पिता और बड़े भाई के साथ मछली पकड़ने पर मजबूर कर दिया। वे पढ़ना तो चाहते थे लेकिन शिक्षा की सामग्रियों को जुटाने तक के पैसे नहीं थे। जुब्बा सहनी के पास जो था वे बड़े ही कम लोगों के पास मिलते हैं, वह है आत्मविश्वास एवं देशप्रेम की भावना। उन्हीं के बल पर ब्रिटिश हुकूमत के सिपाहियों को पीछे हटने पर मजबूर किया तथा उनको आखिरकार देश से निकाल बाहर किया, जिसका परिणाम है कि हम आज स्वतंत्र भारत की हवाओं में सासें ले रहे हैं।

योगेन्द्र शुक्ल का जन्म वैशाली जिला के लालगंज थानान्तर्गत जलालपुर गाँव में 1896 ई0 में हुआ था। मुजफ्फरपुर जिला के अंतर्गत ही वैशाली जिला उस समय आता था। उनकी प्राथमिक पढ़ाई जलालपुर प्राइमरी स्कूल लालगंज मिडिल स्कूल तथा जी0बी0बी0 कॉलेजिएट स्कूल, मुजफ्फरपुर से हुई। वे केवल मैट्रिक तक ही पढ़े थे।

1920 में पढ़ाई के दौरान ही आचार्य कृपलानी के सम्पर्क में आये तथा उनके साथ कई वर्षों तक पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में रहकर जंग–ए–आजादी के लिये हथियारों की तस्करी करते रहे।[7] योगेन्द्र शुक्ल क्रांतिकारी क्रियाकलापों में अपनी सक्रियता दिखाया एवं बनारस और फैजाबाद में खादी का प्रचार करने लगे। परिणाम हुआ कि 1923 ई0 में उन्हें गिरफ्तार कर बनारस जेल में रखा गया। 1924 ई0 में पंजाब, उत्तर प्रदेश एवं बिहार के प्रादेशिक क्रांतिकारी दल को मिलाकर हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन की स्थापना की गई। योगेन्द्र शुक्ल भी इसके एक सदस्य बने तथा तिरहुत में इस संस्था को संगठित कर इसके नेता बने।[8] पटना षड्यंत्र काण्ड के एक अभियुक्त राय महेन्द्र प्रसाद के अनुसार भगत सिंह जब तक बिहार में रहे वे योन्द्र शुक्ल से बेतिया के जंगलों में रिवाल्वर चलाना सीखते रहे क्योंकि योगेन्द्र शुक्ल रिवाल्वर चलाने में दक्षता हासिल कर ली थी। 1924 ई0 में मद्रास में साइमन कमीशन पर योगेन्द्र शुक्ल ने बम फेंका जो असफल रहा।

हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के लिये अस्त्र–शस्त्र खरीदने एवं दल की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये योगेन्द्र शुक्ल ने अनेक राजनैतिक डकैतियाँ डाली। 11 जून, 1930 ई0 को दिघवारा के मलखा चक गाँधी कुटीर पर छापा मार कर योगेन्द्र शुक्ल को एक रिवाल्वर के साथ गिरफ्तार कर लिया। जेल में ही योगेन्द्र शुक्ल की सुनवाई होनी थी जिसे जेल कैदियों ने इसे शुरू नहीं होने दिया।

5 जनवरी, 1931 ई0 को झाझरा डकैती एवं ढेलुआहा डकैती को सम्मिलित कर पटना उच्च न्यायालय में चार्जशीट दर्ज किया जिसे तिरहुत षड्यंत्र काण्ड कहा जाता है। मुख्य अभियुक्तों में थे– योगेन्द्र शुक्ल, राम बिनोद सिंह, राम परीक्षण शर्मा, बसावन सिंह, बैजनाथ सिंह, हरिचरण गोप, महादेव सिंह, ईश्वर दयाल सिंह, भरत सिंह, गोरख सिंह, राजेन्द्र प्रसाद सिंह तथा विश्वनाथ प्रसाद सिंह। 15 फरवरी, 1938 ई0 को राजनैतिक कैदियों की रिहाई को लेकर बिहार के प्रथम कांग्रेसी मंत्रिमंडल के नेतृत्वकर्त्ता श्रीकृष्ण सिंह की सरकार ने त्याग–पत्र दे दिया। ब्रिटिश हुकूमत काफी दबाव में आकर उनकी माँगों को स्वीकार किया। उसके बाद राजनैतिक कैदियों को रिहा किया गया जिसमें योगेन्द्र शुक्ल भी एक थे।[9]जेल से रिहाई के बाद वे कांग्रेस में शामिल हो गये। बक्सर जेल में तीन वर्षों तक बेड़ियों से बाँध कर योगेन्द्र शुक्ल को रखा। मार्च, 1942 ई0 में उन्होंने भूख–हड़ताल की जिसकी विस्तृत चर्चा सर्चलाईट ने अपने सम्पादकीय में किया।[10]

1946 ई0 को योगेन्द्र शुक्ल को जेल से रिहा किया गया। 1958 ई0 में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी की तरफ से बिहार विधान सभा परिषद् के सदस्य के रूप में चयनित हुये। लेकिन काफी दिनों तक जेल जीवन के आलावा ब्रिटिश हुकूमत की शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना ने उन्हें बीमार बना दिया। देशभक्त की मृत्यु 19 नवम्बर, 1960 ई0 को हो गई।[11]

इस प्रकार से हम देखते हैं कि भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में क्रांतिकारी देशभक्तों ने देश को आजाद कराने के लिये ब्रिटिश हुकूमत से सीधी लड़ाई लड़ने का फैसला लिया। अपने त्याग और बलिदान देकर देश को आजाद कराया, यहाँ तक की कुछ क्रांतिकारी देशभक्तों ने देश की खातिर अपने प्राणों की आहूति तक दे दी लेकिन भारत माता को ब्रिटिश हुकूमत की बेड़ियों से छुड़ाने के लिये हर संभव प्रयास किया।

इस प्रकार से अगर हम तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास के पृष्ठभूमि का अध्ययन करने पर पता चलता है कि क्रांतिकारी देशभक्तों का योगदान स्वतंत्रता आन्दोलन में उतना ही है जितना उदारवादी और उग्रवादी स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान था। क्रांतिकारी देशभक्तों ने भी देश की आजादी के लिये उतना ही मेहनत किया जितना की गाँधीवादी विचारधारा के लोगों ने या अन्य संगठनों ने।

बैकुण्ठ शुक्ल का जन्म 1910 ई0 में वैशाली जिला (अब मुजफ्फरपुर जिला) के जलालपुर गाँव में हुआ था। उन्होंने प्राथमिक शिक्षा अपने गाँव के स्कूल से प्राप्त की, उसके बाद मथुरापुर गाँव में लोअर प्राइमरी स्कूल के शिक्षक बन कर बच्चों को शिक्षा देने लगे।

स्वतंत्रता आन्दोलन से प्रेरित होकर 1930 ई0 में बैकुण्ठ शुक्ल सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। कुछ दिनों के बाद उन्हें गिरफ्तार कर पटना कैंप जेल में रखा गया। 1931 ई0 में गाँधी–इरविन पैक्ट के बाद अन्य सत्याग्रहियों के साथ उन्हें भी रिहा किया गया। फणीन्द्रनाथ घोष की हत्या बैकुण्ठ शुक्ल तथा चन्द्रमा सिंह के द्वारा 9 नवम्बर, 1932 ई0 को कर दी गयी। 9 नवम्बर, 1932 ई0 को 8.30 बजे रात्रि में सिपाही सहदेव सिंह ने बेतिया थाना में मुकदमा दर्ज कराया। काफी छानबीन के बाद पुलिस को यकीन हो गया कि फणीन्द्रनाथ की हत्या में बैकुण्ठ शुक्ल एवं चन्द्रमा सिंह ही शामिल थे। अगस्त, 1932 ई0 से बैकुण्ठ शुक्ल फरार थे जब उनके घर में एक रिवाल्वर पाया गया। ब्रिटिश हुकूमत ने उन पर इनाम घोषित किया।[12] उस जमाने में 500 रूपया बहुत अधिक था और ये इनाम बड़े–बड़े अपराधियों पर लगाये जाते थे। 6 जुलाई, 1933 ई0 को सोनपुर में हाजीपुर पुल के पास एक पुलिस दल द्वारा गिरफ्तार किये गये जिसका नेतृत्व दारोगा केदार सिंह कर रहे थे। बैकुण्ठ शुक्ल को फणीन्द्रनाथ घोष तथा गणेश प्रसाद गुप्त की हत्या के लिये भारतीय दण्ड संहिता की धारा–302/38 फाँसी की सजा दी गयी। सत्र न्यायालय के फैसले के खिलाफ बैकुण्ठ शुक्ल ने पटना उच्च न्यायाल में अपील की परंतु उच्च न्यायालय ने सत्र न्यायालय के फैसले को बरकरार रखा। परिणामस्वरूप 14 मई, 1934 ई0 में बैकुण्ठ शुक्ल को गया जेल में फाँसी दे दी गयी।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि बैकुण्ठ शुक्ल की इच्छाशक्ति एवं ब्रिटिश हुकूमत से लड़ने का जज्बा ने ब्रिटिश सेना को पछाड़ दिया। प्रतिक्रिया में ब्रिटिश सेना ने उन पर ताबड़तोड़ हमला कर पहले तो उन्हें इस जेल से उस जेल किया फिर कानूनी प्रक्रिया करते हुये उन्हें फाँसी की सजा सुनायी और अंततः 14 मई को भारत के एक वीर सिपाही धरती माता की आजादी के लिये खुद को कुर्बान कर दिया।

सारण जिले के दिघवारा थाने के मलखाचक गाँव में जन्में रामबिनोद सिंह की शिक्षा भूमिहार–ब्राह्मण कॉलेज मुजफ्फरपुर (वर्तमान में लंगट सिंह कॉलेज) एवं टी0एन0बी0 कॉलेज, भागलपुर तथा सेंट कोलम्बस कॉलेज हजारीबाग में हुयी। खुदीराम बोस से प्रभावित रामबिनोद सिंह ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़ फेंकने के लिये ढाका अनुशीलन समिति के सदस्य बने।

13 दिसम्बर, 1918 ई0 को रामबिनोद सिंह को पहली बार हजारीबाग पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। उनके पास से अनेक पत्र बरामद किये थे, जिसमें बिहार में अनेक प्रस्तावित हत्याओं की योजना थी।[13] जिस दिन उनकी गिरफ्तारी भारत रक्षा कानून के तहत हुयी तब विद्यार्थियों ने हड़ताल किया। जनवरी, 1920 ई0 को रामबिनोद सिंह को रिहा किया गया। उसके बाद वे बी0ए0 की परीक्षा देने के बहाने पटना आ गये जबकि उनका मुख्य उद्देश्य ढाका अनुशीलन के कार्यकलापों को सुसंगठित करना था।

दूसरी बार जब गाँधीजी बिहार आये तो रामबिनोद सिंह उनसे मिलकर आग्रह किया कि वे क्रांतिकारी आन्दोलन में शामिल हो जायें। गाँधीजी ने उनकी देशभक्ति की सराहना की लेकिन उनका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया।

1920 ई0 में गाँधीजी के द्वारा शुरू किये गये असहयोग आन्दोलन में रामबिनोद सिंह ने मुख्य भूमिका निभाते हुये सर्वप्रथम अपनी पढ़ाई छोड़ दी, आन्दोलन के महत्वपूर्ण कार्यकर्त्ता बने तथा खादी का प्रचार किया। उन्होंने मलखाचक में पिता के आर्थिक सहयोग से लघु पैमाने पर खादी का कारोबार शुरू किया। बाद में कांग्रेस की सहायता से यह कारोबार बहुत आगे बढ़ गया। कांग्रेस कोष से गाँधीजी ने एक लाख रूपये दिये तो जवाहरलाल नेहरू ने पाँच हजार रूपये ऋण दिया।[14]

उन्होंने दो और गाँधी कुटीर खोला– एक मधुबनी में तथा दूसरा दरभंगा जिले के कपसिया में। गाँधी कुटीर ने रामबिनोद सिंह के नेतृत्व में खादी के प्रचार–प्रसार का उत्तम काम किया। भारत तथा अमरीका के भिन्न–भिन्न जगहों के लोग गाँधी कुटीर आते थे। अखिल भारतीय बुनकर संघ की एक शाखा लक्ष्मी नारायण के निर्देशन में मुजफ्फरपुर में खोली गयी। लक्ष्मीनारायण तथा रामबिनोद सिंह के बीच प्रतिस्पर्द्धा हो गयी तथा प्रादेशिक कांग्रेस कमिटी ने रामबिनोद को अपने खादी कारोबार को निजी कारोबार की जगह सार्वजनिक कारोबार घोषित करने का निर्देश दिया।[15] प्रतिक्रिया स्वरूप 1926 ई0 में कांग्रेस ने गाँधी कुटीर को आर्थिक मदद देना बंद कर दिया।[58] तथा इसके कार्यकलापों की जाँच का आदेश दिया।

इस घटना को एक दुःखद घटना बताते हुये राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी आत्मकथा में लिखा है ''1921 ई0 में खादी प्रचार का काम आरम्भ किया गया था। हमारे सूबे में श्री रामबिनोद सिंह ने बहुत उत्साह और योग्यता के साथ इसको शुरू किया था।''

गाँधी कुटीर खादी के उत्पादन तथा बिक्री से जुड़ा था, यह क्रांतिकारी आन्दोलन का केन्द्र था। भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद तथा अन्य क्रांतिकारी गाँधी कुटीर में गुप्त सभाएँ करते थे। एक सरकारी रिपोर्ट के अनुसार 1928 ई0 तथा 1930 ई0 के बीच रामबिनोद सिंह दोहरी जिन्दगी जी रहे थे। एक तरफ वे कांग्रेसी नेता के रूप में खादी का प्रचार करते थे तथा दूसरी तरफ उनके सभी सहयोगी क्रांतिकारी विचारधारा के थे जयचन्द्र विद्यालंकर, आचार्य कृपलानी तथा रासबिहारी लाल।[16] 1928 ई0 में 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' का गठन हुआ तब बिहार के अन्य क्रांतिकारी युवकों के साथ रामबिनोद सिंह भी इसके सदस्य बने। उनके साथ कमलनाथ तिवारी योगेन्द्र शुक्ल, सत्यनारायण सिंह तथा सूरज नारायण सिंह भी इसके सदस्य बने थे।

1928 ई0 से 1930 ई0 के बीच हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के योजना के अनुसार बिहार में कई स्थानों पर डकैतियाँ डाली गयी जैसे, बाजिदपुर, मौलनिया, झाझरा तथा ढेलुआहा डकैतियाँ। रामबिनोद सिंह ने इन डकैतियों को संगठित किया तथा दिशा–निर्देश दिया। मुजफ्फरपुर का उनका मकान क्रांतिकारियों का अड्डा था। रामबिनोद सिंह को जुलाई, 1930 ई0 में योगेन्द्र शुक्ल को शरण देने के लिये जो 11 जून, 1930 ई0 को गाँधी कुटीर में पकड़े गये थे, अभियुक्त बनाया गया।

24 जून, 1930 ई0 को एक बड़ा पुलिस दल दिघवारा पहुँचा तथा गाँधी कुटीर तथा अन्य स्थानों पर एक ही साथ छापा मारा। एक दल ने गाँधी कुटीर तथा रामबिनोद सिंह के जनानाखाना पर उनकी अनुपस्थिति में छापा मारा तथा एक चमड़ा का सूटकेस बरामद किया। यह सूटकेस रामबिनोद सिंह के बरामदे में भूसा में छिपा कर रखा था। सूटकेस से 6 कक्षों वाला रिवाल्वर बरामद किया जिसमें पाँच कक्ष जिन्दे कारतूस से भरी हुयी थी। एक अन्य थैले से दो 12 बोर की खाली लम्बे कारतूस, दो छोटे रिवाल्वर के कारतूस, तथा 12 बोर के 24 जिन्दा कारतूस रखे हुये थे। एक पैकेट वेब्ली ''पेटनेट कैपस'', रिवाल्वर साफ करने वाला एक पीतल का छड़, एक छोटा पीतल का छड़ जिसपर 504 नम्बर अंकित था, एक शीशी नारियल जैसा तेल, कुछ पदार्थ, तीन फलानेन का टुकड़ा, दो मोटे कपड़े का टुकड़ा, नये गाढ़े कपड़े का 9 टुकड़ा, 8 मोटे बस्ते का कपड़ा, पाँच नेपाली भुजाली जिसमें एक बिना मियान के तथा चार मियान के साथ एक कपड़े में बाँधा हुआ तथा दो रिवाल्वर के कारतूस पाये गये।[17]

फरवरी, 1932 ई0 में जेल से रिहा होने के बाद रामबिनोद सिंह ने अपने क्रांतिकारी दल को संगठित कर के हाजीपुर शाखा से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित किया। हाजीपुर स्टेशन डकैती षड्यंत्र में जेल में बन्द रामदेनी सिंह से फाँसी से पहले मिले थे तथा उनकी अंतिम संस्कार की व्यवस्था की। उन्होंने तीन भूमिगत क्रांतिकारियों– जगन्नाथ सिंह, चन्द्रमा सिंह तथा चन्द्रिका सिंह को शरण दिया तथा उनके परिवार को आश्रय प्रदान किया था। रामदेनी सिंह ने देवानाथ सिंह, इन्द्रदेव सिंह तथा जुग सिंह के माध्यम से इन क्रांतिकारियों के सम्पर्क में रहे। कलकत्ता में जगन्नाथ सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया तो रामबिनोद सिंह ने उन्हें छुड़ाने का प्रयास किया। उन्होंने बैकुण्ठ शुक्ल को भी एक रिवाल्वर दिया था जिसे पुलिस ने पकड़ लिया।[18]

24 नवम्बर, 1932 ई0 को ब्रिटिश हुकूमत ने 40 क्रांतिकारियों को क्रीमिनल ट्राइब के सदस्य होने की घोषणा की जिसमें सम्मिलित थे– रामबिनोद सिंह, सत्यनारायण सिंह तथा अन्य तिरहुत षड्यंत्र, हाजीपुर डकैती, छपरा षड्यंत्र, पटना षड्यंत्र तथा कुछ आर्म्स एक्ट के अभियुक्त।

बिहार तथा उड़ीसा पब्लिक सेफ्टी एक्ट 1933 ई0 के प्रावधानों को लागू करने के संबंध में गुप्तचर विभाग के उपमहानिरीक्षक ने अपनी रिपोर्ट में लिखा ''वास्तव में रामबिनोद सिंह उत्तर बिहार का एक बहुत ही बुरा आदमी है तथा 1928 ई0 से तिरहुत में घटनेवाली सभी षड्यंत्रों तथा अपराधों को बढ़ावा देता रहा है। जून 1930 से 1932 ई0 के बीच जब वह जेल में था तब भी उसका प्रभाव उसके मुख्य सहकर्मी राम देनी सिंह के माध्यम से बना रहा। तिरहुत के सभी छोटे–छोटे आपराधिक गिरोह उसके नियंत्रण में है तथा हाल के रिपोर्ट के अनुसार वह भागलपुर प्रमंडल में भी अपना दबदबा बनाना चाहता है।

''इसलिये मैं आग्रह करूँगा कि ऐसा आदेश पारित किया जाये कि रामबिनोद अपने गाँव तथा दिघवारा से सटे अपनी जमीन, मकान तथा गाँधी कुटीर की परिसीमा में अगले छः महीने तक रहे तथा सप्ताह में एक दिन दिघवारा थाना के पुलिस प्रभारी से मिला करें।''[19]

परिणामस्वरूप मुख्य सचिव ने पब्लिक सेफ्टी एक्ट के तहत रामबिनोद सिंह को उनके गाँव में ही नज़रबंद करने का आदेश दिया। आदेश में लिखा था ''बिहार तथा उड़ीसा सरकार, बिहार तथा उड़ीसा पब्लिक सेफ्टी एक्ट 1933 की धारा–2 की उपधारा–1 (बिहार तथा उड़ीसा एक्ट 1, 1933) में प्रदत्त शक्तियों का इस्तेमाल करते हुये निदेशित करती है कि रामबिनोद सिंह अपने गाँव मलखाचक तथा दिघवारा थाना नं0–130 तथा 140 दिघवारा जिला सारण, में ही रहे तथा जिला मजिस्ट्रेट की पूर्व अनुमति के बिना इस परिसीमा का उल्लंघन न करें। परंतु क्रीमिनल ट्राइब एक्ट, 1924 के तहत (एक्ट–6, 1924) जिसके वे अभियुक्त है, कचहरी जा सकेंगे। बिहार तथा उड़ीसा सरकार इस एक्ट की धारा–2 की उपधारा–2 के अंतर्गत यह भी निदेश देती है कि यह व्यवस्था आदेश निर्गत होने की तिथि से छः महीने तक बनी रहेगी।''[20] क्रीमिनल ट्राइब एक्ट के अंतर्गत उनके आवागमन पर रोक लगने के कारण उनका व्यवसाय चौपट हो गया।

10 अक्टूबर, 1934 ई0 को रामबिनोद ने मुख्य सचिव को एक पत्र लिखकर उनसे आग्रह किया कि उन्हें अपने कारोबार के काम से भागलपुर जाने का आदेश दिया जाये। उन्होंने पत्र में लिखा, ''मैं अपने गाँव में आपके आदेश(आदेश नं0–3275 सी, राँची, 26 जून, 1934) से नजरबंद हूँ। मैंने अनेक बार जिलाधीश को पत्र लिखा कि मुझे अपने कारोबार की देख–रेख के सिलसिले में बाहर जाने की अनुमति दी जाये परंतु हर बार जिलाधीश ने इसे नामंजूर कर दिया। अंतिम बार 8 जुलाई को मैंने जिलाधीश के पास एक आवेदन दिया था कि वे 17 जुलाई को मुझे अपनी नाव–सेवा की देखरेख के लिये जाने दें जो भागलपुर जिले के प्रतापगंज तथा भीमनगर थाने में स्थित है तथा मुझे वहाँ तीन महीने रहने की अनुमति दी जाये तथा वहाँ से बीच–बीच में इस सिलसिले में भागलपुर जाने की भी अनुमति दी जाये लेकिन इसे भी नामंजूर कर दिया गया।''

उन्होंने पत्र में आगे लिखा की वे एक संयुक्त परिवार के मुखिया है जिसके भरण–पोषण का नैतिक दायित्व मुझ पर ही है। अगर उन्हें परिवार के भरण–पोषण के लिये बाहर नहीं जाने दिया जाता तो परिवार के भरण–पोषण के लिये जीवनभत्ता दिया जाये। मुख्य सचिव ने तिरहुत के आयुक्त को कहा कि वे रामबिनोद सिंह को सूचित कर दे कि सरकार उनके आग्रह को मानने के लिये तैयार नहीं है।

10 नवम्बर, 1934 ई0 को रामबिनोद सिंह ने मुख्य सचिव को दूसरा पत्र लिखकर कारोबार की गिरती दशा से अवगत कराते हुये बाहर जाने की अनुमति माँगी, लेकिन ब्रिटिश हुकूमत ने बदले में रामबिनोद सिंह की नजरबंदी की अवधि और बढ़ा दी।[21] बिहार में प्रथम कांग्रेसी मंत्रिमंडल 1937 ई0 के गठन के बाद रामबिनोद सिंह बाहर निकल सके। 1942 ई0 के भारत छोड़ो आन्दोलन में रामबिनोद सिंह ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुये 9 अगस्त, 1942 ई0 को गिरफ्तार कर लिये गये। उनकी गिरफ्तारी के बाद उनकी बेटी शारदा देवी तथा सरस्वती देवी ने भारत छोड़ो आन्दोलन का नेतृत्व किया तथा 12 अगस्त को दिघवारा थाने पर आक्रमण का नेतृत्व किया। 20 अगस्त को पुलिस ने रामबिनोद सिंह के घर को डायनामाइट से उड़ा दिया, उनकी पुस्तकालय जला डाली गयी तथा छः महीने तक उनकी पत्नी तथा पुत्रियों का पीछा करती रही। आजादी के बाद वे कांग्रेस पार्टी की ओर से 1957 तक बिहार विधान सभा के सदस्य रहे। 1962 में मतभेद के बाद जन कांग्रेस पार्टी के सदस्य बन गये। 23 मई, 1969 ई0 को उनकी मृत्यु हो गयी।

रामबिनोद सिंह एक नामी कांग्रेसी, एक समाजसेवी तथा हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी के सदस्य थे। ब्रिटिश सरकार उन्हें एक खतरनाक क्रांतिकारी तथा ब्रिटिश हुकूमत अपने लिये सीधा खतरा समझती थी। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में अपनी क्रांतिकारी भूमिका से ही सही लेकिन देश की सच्ची सेवा की और जब भी देश की जरूरत पड़ी, बलिदान को तो रामबिनोद सिंह पहली पंक्ति में नजर आये। देश की आजादी के बाद वे राजनीति में आ गये और अब वे देश के विकास के लिये और आम जनता के विकास के लिये प्रयास करने लगे। 23 मई, 1967 ई0 को उनकी मृत्यु हो गयी।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

श्रीवास्तव, एन0एम0पी0– स्ट्रगल ऑफ फ्रीडम : सम ग्रेट इण्डियन रिव्युलुशनरी के0पी0जे0 रिसर्च इंस्टीच्यूट, पटना पृ0सं0–51–60
चाँद (फाँसी अंक), नवम्बर 1928, पृ0सं0–113, 1988 में राधाकृष्ण प्रकाशन ने इसे पुनः प्रकाशित किया।
हिस्ट्रीशीट ऑफ सरयू प्रसाद, बिहार एण्ड उड़ीसा पुलिस ऑस्ट्रेक्ट ऑफ इंटेलिजेंस, जुलाई 1913
बिहार हिन्दी मासिक– भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में बिहार का योगदान विशेषांक (अक्टूबर) सूचना जनसंपर्क विभाग बिहार सरकार, पृ0सं0–26
राज, अमित– भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में उत्तर बिहार के कुछ गुमनाम स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान 1919–1947 ई0, शोध–प्रबंध (अप्रकाशित) पटना विश्वविद्यालय पृ0सं0–176
वही।
भूयां, अरूण– दि क्वीट इंडिया मूवमेंट, पृ0सं0–112
इंडियन एक्सप्रेस– अक्टूबर 9, 1979
डी0आई0जी0(सी0आई0डी0) का पत्र बिहार तथा उड़ीसा सरकार के मुख्य सचिव को फरवरी 2, 1931
सर्चलाईट, जुलाई, 17, 1965
बिहार समाचार अगस्त 15, 1970 पृ0सं0–39
सर्चलाईट, जुलाई 9, 1933
दत्ता, के0के0– फ्रीडम मूवमेंट इन बिहार भाग–1, पृ0सं0–137
पुलिस ऑफिस छपरा(सारण) का पत्र बिहार तथा उड़ीसा के डी0आई0जी0(सी0आई0डी0) के नाम जून 29, 1930
पॉलिटिकल(स्पेशल) बिहार तथा उड़ीसा सारण, फाईल नं0–263, 1930
श्रीवास्तव, एन0एम0पी0– रास बिहार लालः दि रिव्यूलुशनरी सर्चलाईट मई 2, 1984
डी0आई0जी0(सी0आई0डी0) का पत्र बिहार तथा उड़ीसा के मुख्य सचिव को जुलाई, 3, 1930
पॉलिटिकल(स्पेशल) फाईल संख्या–47, 1934
डी0आई0जी0(सी0आई0डी0)– बिहार तथा उड़ीसा के पब्लिक सेफ्टी एक्ट के दीर्घीकरण पर रिपोर्ट फरवरी 24, 1934
सर्चलाईट, जुलाई 13, 1934
सर्चलाईट, दिसम्बर 16, 1934